भारतीय लोक संस्कृति का परिशीलन

*डॉ. अनुजा शर्मा

शोध सारांश

भारतीय संस्कृति, की अपनी एक अलग पहचान है। भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। इसका सम्बन्ध किसी देश व क्षेत्र विशेष के सामान्य जन–समुदाय से होता है। समाज में प्रचलित विभिन्न क्रिया–कलाप, परम्पराये, अचार–विचार संस्कार, प्रथाएँ, कर्मकाण्ड आस्था एवं विश्वास, लोक संस्कृति के आधारभूत तत्व है। समाज और संस्कृति की बात की जाए तो समाज और संस्कृति में गहरा संबंध है। व्यक्ति से ही समाज बनता है। समाज में संस्कार नियम और लोगों का समूह होता है। संस्कृति व्यक्ति एवं समाज के विकास का परिचायक होती है। लोक जीवन इसी संस्कृति का भण्डार है। संस्कृति समाज को आकार देता है। पं बलदेव उपाध्याय के अनुसार ''लोक संस्कृति शिष्ट संस्कृति की सहायक होती है। किसी देश के धार्मिक विश्वासों अनुष्ठानों तथा क्रियाकलापों के पूर्ण परिचय के लिए दोनों संस्कृतियों में परस्पर सहयोग अपेक्षित है।'[1]

भारतीय संस्कृति मनुष्य के भीतर छिपी हुई उसकी दिव्यता को प्रकाशित करने के प्रयत्नों का सामूहिक नाम है यह इतनी बहुआयामी है कि इसका कोई एक लक्षण निर्धारित नहीं किया जा सकता। भारतीय संस्कृति की पहचान के लिए देश के विविध धर्म, वर्ग, जाति के लोगों के व्यवहार को देखना चाहिए। अच्छा, बुरा, सही गलत आदि का चिंतन मनुष्य करता है। रामधारी सिंह दिनकर ने कहा है कि संस्कृति मानव जीवन में उसी प्रकार व्याप्त है जिस प्रकार फूलों में सुगन्ध और दूध में मक्खन इसका निर्माण एक या दो दिन में नहीं होता युग–युगान्तर से संस्कृति निर्मित होती है। संस्कृति किसी भी राष्ट्र की उत्कृष्टतम निधि होती है। राष्ट्र विशेष का जीवन–स्मरण, उसकी उन्नति अवनति, प्रतिष्ठा आदि तथ्य उसकी संस्कृति पर आधारित रहते हैं जिस राष्ट्र की संस्कृति जितनी उदात्त होती है, वह राष्ट्र उतना ही गौरवशाली बनता है। संस्कृति वह प्रक्रिया है जिससे किसी देश के सर्व साधारण का व्यक्तित्व निष्पन्न होता है। इससे मानव समाज की उस स्थिति का बोध होता है, जिससे उसे सुधरा हुआ, ऊँचा, सभ्य आदि आभूषणों से आभूषित किया जाता है।'[2]

लोक संस्कृति दो शब्दों से मिलकर बना है लोक+संस्कृति। अंग्रेजी भाषा के Folk शब्द कोडच में vok, जर्मन में volk एवं एंग्लोसैक्शन में Fole कहते हैं, जिसका शाब्दिक अर्थ किसी आदिकालीन सामाजिक या राजनैतिक संगठन से होता है डॉ० कुन्जबिहारी दास की पुस्तक। 'Study of orrisa on folklore' में लिखा है कि 'लोक के अंतर्गत उन समस्त व्यक्तियों का सम्मिलित किया जा सकता है, जो कि किसी न किसी सीमा तक आदिकालीन अथवा पिछड़ी हई दशाओं में रहते हैं तथा आधुनिक एवं प्रगतिशील प्रभावों की परिधि से विलग होते हैं।

समाज और संस्कृति की बात की जाए तो समाज और संस्कृति में गहरा संबंध है। व्यक्ति से ही समाज बनता है। समाज में संस्कार नियम और लोगों का समूह होता है। मनुष्य की यह प्रवृत्ति होती है कि वह हमेशा कुछ नवीन खोजने की जिज्ञासा में लिप्त रहता है और हर क्षण प्रगति की ओर उन्मुख रहता है। जैसे कोई व्यक्ति समाज के बिना नहीं रह सकता, उसी प्रकार वह समाज के सांस्कृतिक नियमों से परिपूर्ण हुए बिना सम्पूर्ण नहीं माना जाएगा। व्यक्ति का अधिकतर समय समाज में ही गुजरता है। वह समाज में रहकर ही समाज में घटित घटनाओं के माध्यम

से नित नवीन व्यवहार हर रोज सीखता रहता है। समाज में व्यक्ति को अपना अस्तित्व स्थापित करने हेतु नैतिक मूल्यों की आवश्यकता है। नैतिक मूल्यों के अनुरुप आचरण ही उसे चरित्रवान बनाता है। सदगुणों को अपनाकर ही हमें सच्चे सुख, संतोष और आनंद की प्राप्ति होती है। अनेक विभिन्नताओं के बावजूद भी भारत की पृथक सांस्कृतिक सत्ता रही है। भाषाओं की विविधता अवश्य है फिर भी संगीत, नृत्य और नाट्य के मौलिक स्वरुपों में आश्चर्यजनक समानता है। यह एक देश नहीं बल्कि कई देशों का एक समूह है जो एक–दूसरे से बहुत बातों में और विशेष करके ऐसी बातों में जो आसानी से आँखो के सामने आती है बिल्कुल भिन्न है।[3]

लोक संस्कृति की कलात्मक विशेषताओं और उनकी रूचियों को इंग्ति करती है लोककला। जिसमें मूर्तिकला, स्थापत्य कला, चित्रकला, मेंहदी, महावर, वास्तुकला आदि आते है। लोककला को लोक जीवन का आर्थिक मेरूदण्ड कहा जा सकता है। लोक संस्कृति जनमानस व सामान्य जन की संस्कृति है। इसे जनवादी संस्कृति भी कहा जाता है। गोर्कीजनसंस्कृति जनमानस की संस्कृति है। इसे जनवादी संस्कृति भी कहा जाता है। गोर्कीजनसंस्कृति की तुलना बिना तराशे हुए अनगढ़ पत्थर से करते है और कहते है कि लोकगीत, लोकनृत्य, लोककला और अन्य सांस्कृतिक रूप बिना तराशे गये पत्थरों की तरह है। लोक चेतना और उससे उपजी संस्कृ ति किसी भी सभ्यता और साहित्य की परिचालक शक्ति होती है जो साहित्य अपने लोक चेतना और शक्ति से जितना अधिक जुड़ा रहता है उतना सभ्य प्रतिनिधि होता है। उतना ही कालजयी और लोकव्यापी होता है। लोक सांस्कृति के अंतर्गत संस्कृति और लोक दोनों का भाव छिपा है।

कई बार किसी शब्द के अंतर्गत इतने अधिक अर्थो को समाहित कर लिया जाता है कि उस शब्द के किसी एक अर्थ को निश्चित करना अत्यंत कठिन हो जाता है। संस्कृति शब्द भी उसी प्रकार का है। संस्कृति को अनेक विद्वानों ने परिभाषित किया है। सर्वपल्ली राधाकृष्णन – संस्कृति वह वस्तु है, जो स्वभाव, माधुर्य, मानसिक निरोगता एवं आत्मिक शक्ति को जन्म देती है। श्री प्रभु दयाल मित्तल – संस्कृति किसी भी देश, जाति या समाज की आत्मा होती है, जिसमें देश, जाति या समाज के चिंतन, मनन, आचार–विचार, रहन सहन – बोली, भाषा, वेशभूषा, कला, कौशल आदि सभी बातों का समावेश होता है। इस प्रकार समाज में विभिन्न श्रेणियों का अन्तर प्राचीन काल से रहा है भारत के सम्बन्ध में भी यह तथ्य लागू होता है, यहां विभिन्न नृवंशीय वर्ग निवास करते आए है। प्रत्येक की विशिष्ट सांस्कृतिक उपलब्धियों, कला, संगीत, बोली और रीति रिवाज रहे है। समष्टि के रूप में, इन्हें लोक संस्कृति कहा जा सकता है। पाश्चात्य देशों की ही भाँति, यह संस्कृति उच्च स्तरीय वर्गों की न होकर, निम्न स्तरीय वर्गों की है। इस प्रकार लोक संस्कृति समाज की सम्पूर्ण संस्कृति का एक महत्वपूर्ण पक्ष है और बहुसंख्यक जनता का प्रतिनिधित्व करती है।

लोक संस्कृति की परिभाषा लोक संस्कृति लोक जीवन को अभिव्यक्त करती है। डॉ० सम्पूर्णानन्द के अनुसार द्वारा लोक की आत्मा बोलती है। 'लोक सस्कृति वह जीती जागती चीज है जिसकेद्वारा लोक की आत्मा बोलती है।'

गिरिजा कुमार माथुर के शब्दों में जन संस्कृति (लोक संस्कृति) अनुभूति, भावना और विचार की एक अदृश्य किन्तु अमित डोर के समान है जिसे एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को थमाती हुई चली जाती है, गीतों, नृत्यों कथाओं, कहावतों रीति रिवाजों, ऋतु–पर्वो का रूप घर कर लोक संस्कृति एक अगर यात्री की तरह स्थान–स्थान पर भ्रमण करती है और टिक जाती है। टिक कर एक नया संसार अपने साथ बाँधकर नया रूप घर कर फिर भ्रमण करने लगती है। जीवन के समस्त पक्षों को समेट कर चलती है।

लोक संस्कृति में लोक जीवन के सभी पक्ष शामिल रहते है।

(1) **लोक वार्ता :–** 'लोक वार्ता' शब्द 'फोकलोर का हिन्दी रूपान्तर है। श्री डब्ल्यू.जे. थामस ने इसका प्रयोग,

असंस्कृत समुदाय की प्रथाओं तथा रीति–रिवाजों को स्पष्ट करने के लिए किया था। आज लोकवार्ता के अन्तर्गत, रीति–रिवाज, विश्वास, प्रथाओं, लोकगीत, लोक साहित्य, धर्म गाथाओं लोरियाँ, पहेलियों इत्यादि को शामिल किया जाता है।

(2) **लोक कला :–** इसके अन्तर्गत लोक जीवन में प्रचलित चित्रकला, वस्तुकला, आदि को शामिल किया जाता है। इसके माध्यम से लोक जीवन के आदर्श मान्यतायें तथा दृष्टिकोण आदि प्रकट होते है।

(3) **लोक नृत्य :–** जिस प्रकार बौद्धिक संस्कृति में, नृत्य, सामाजिक वातावरण तथा प्रकृति के बारे में मनुष्य के ज्ञान को प्रकट करते है, उसी प्रकार लोक नृत्य भी अपने सरलपन द्वारा लोक जीवन के स्तर को प्रकट करते है।

इस प्रकार लोक संस्कृति के अन्तर्गत लोकप्रिय कलाओं, शिला, रीति–रिवाज, विश्वास, प्रथायें, लोक साहित्य, अनुष्ठान तथा मानवकृत वस्तुयें आदि सभी सम्मिलित है। संक्षेप में लोक जीवन के भौतिक और अभौतिक पक्षों के अन्तर्गत जो भी आते हैं, वे लोक संस्कृति के अन्तर्गत सम्मिलित है। इसके माध्यम से लोक जीवन की भौतिक और अभौतिक दशायें अभिव्यक्त होती है। समाज परिवर्तनशील है। समय के अनुसार समाज में परिवर्तन होता रहता है। भारतीयों की आंतरिक कलह, विदेशियों का आगमन, विदेशी संस्कृति का कुप्रभाव आदि के कारण समाज में परिवर्तन होने लगे। जनता को शिक्षित होने का अवसर पूर्व से अधिक मिलता गया। जिससे उनके देखने का दृष्टिकोण भी बदलने लगा। लोग जिस भारतीय संस्कृति की परिधि में सीमित थे उससे बाहर आने लगे समय के अनुसार मनुष्य की सोच, खोज की वृत्ति, उन्नति की महत्वकांक्षा आदि ने मानव को अपनी संस्कृति और सभ्यता से दूर हटा दिया। उनमें मुख्यत वेशभूषा, रहन–सहन, खान–पान, व्यवहार आदि है। आधुनिकता के नाम पर मनुष्य अपने मनोवांछित काम करने लगे और उसके पीछे भाग–दौड़ करते हैं। जिससे भारतीय संस्कृति बुनियाद पर निर्मित समाज और उसकी सभ्यता हिलने लगी है।

आज ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी है कि मनुष्य जो भी करता है, उसे भारतीय संस्कृति ही कहते हैं। हमारी सभ्यता का सुंदरतम रूप है समाज जो परिवार नामक छोटी–छोटी इकाइयों से बनी होती है। भावनाओं की बुनियाद पर विश्वास के बंधन परिवार सुरक्षित रहता है। परिवार में कर्तव्य आव एवं दायित्व का पालन करना अहं शिक्षा होती है जो भविष्य में समाज और राष्ट्र की उन्नति में सहायक होगी। आज के वैश्वीकरण के युग में परिवेश के कारण भारतीय संस्कृति में भले ही कितनी विकृतियाँ और विसंगितयाँ आ गयी हो परन्तु हमारे समाज की सबसे मजबूत संस्था परिवार अभी भी अपना अस्तित्व बनाए हुए है।

वर्तमान आधुनिकता के दौर में जहाँ व्यक्ति कुंठा, निराश का शिकार हो जाता है ऐसे में परिवार से ही उसे नैतिक बल व भावानात्मक संबल मिलता है। भारतीय परंपरा में छोटे उत्सव के अवसर पर या महत्वपूर्ण कार्य शुरु करने से पहले अपने बड़ों के पैरों को छूकर आशीर्वाद लेते हैं। अतिथीदेवोभव की अवधारणा में विश्वास करते है। परिवार के सबसे वरिष्ठ या सबसे पुराने सदस्य को परिवार का प्रमुख माना जाता है। आनंद और खुशी के साथ विभिन्न प्रकार के त्यौहार मनाये जाते हैं। भारतीय संस्कृति की नींव परम्पराओं पर टिकी हुई है। सामान्य अर्थ में आधिभौतिक संस्कृति को संस्कृति और भौतिक संस्कृति को सभ्यता के नाम से अभिहित किया जाता है। संस्कृति के ये दोनों पक्ष एक दूसरे से भिन्न होते है। संस्कृति आभ्यांतर है, इसमें परम्परागत चिंतन, कलात्मक अनुभूति, विस्तृत ज्ञान एवं धार्मिक आस्था का समावेश होता है। सभ्यता बाहय वस्तु है, जिसमें मनुष्य की भौतिक प्रगति में सहायक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और वैज्ञानिक उपलब्धियाँ सम्मिलित होती हैं। संस्कृति साध्य है और सभ्यता साधन जो सभ्यता निर्मित होती है, वहीं समाज द्वारा गृहीत होती है। अंत में यदि हमें अपनी संस्कृति को जीवित रखना है व अपने समाज व देश में उन सब अन्याय और अत्याचारों की पुनरावृर्ति नहीं करनी, जिनके द्वारा आज के सारे संघर्ष

उत्पन्न होते है तो हमें अपनी ऐतिहासिक नैतिक चेतना या संस्कृति के आधार पर ही अपनी आर्थिक व्यवस्था बनानी चाहिए अर्थात् उसके पीछे वैयक्तिक लाभ और भोग की भावना प्रधान न होकर वैयक्तिक त्याग और सामाजिक कल्याण की भावना ही प्रधान होनी चाहिए।[5]

निष्कर्ष :–

हम कह सकते है। लोक संस्कृति की प्रासंगिकता के संदर्भ में पुरूष एवं महिला, ग्रामीण तथा शहरी लोग शिक्षित एवं अशिक्षित सभी व्यक्तियों ने माना कि लोक संस्कृति हमारे सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण प्रेरक तत्व है। लोक संस्कृति व्यक्ति को प्राचीन व्यवस्था से आधुनिक व्यवस्था को जोड़ने की एक कड़ी काम करता है। नियंत्रण और दृष्टिकोण को परिमार्जित करने का काम करता है क्योंकि संस्कृति किसी भी समाज की प्राणवायु है तो लोक संस्कृ ति धमनियाँ है। लोक संस्कृति, अपनी विविधता को मूल संस्कृति में पिरोने का कार्य करती है। लोक संस्कृति जीवन में जागृति पैदा करती है सकारात्मक सोच व उत्साह लाती है। ये सोच जीवन की वे संजीवनी बूटियाँ है जो पतझड़ में बसन्त का काम करती है। सरल शब्दों में हम कह सकते है कि लोक संस्कृति उस विधि का प्रतीक है जिसमें हम सोचते है और कार्य करते है।

लोक संस्कृति जीवन के अभिन्न अंश है यह वह गुण है जो हमें सामाजिक मानव बनाता है लोक संस्कृति परमपराओ से विश्वासों से जीवन की शैली से, अध्यात्मिक पक्ष से नैतिक पक्ष से तथा भौतिक पक्ष से भी निरंतर जुड़ी है। यह हमें जीवन का अर्थ जीवन जीने का तरीका सिखाती है। व्यक्ति ही लोक संस्कृति तथा व्यक्ति को प्रभावित कर सामाजिक बनाता है। लोक संस्कृति एक दूसरे को निकट लाता है प्रेम सहिष्णुता, शन्ति और प्रेम का पाठ पढ़ाता है। मनुष्य अपने आस–पास विभिन्न भाषाओं में वात करने वाले विभिन्न धर्मो और रीति–रिवाजों को मानने वाले लोगों को देखते है, ये विविधताएँ, खान–पान पहनावे, नृत्य, संगीत, कला के क्षेत्र में है। लेकिन इस सब में एकात्मकता भी है जो सभी को जोड़ने का काम करती है।

***सह–आचार्य**
संस्कृत विभाग
राजकीय महाविद्यालय, टोंक (राज.)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आदेश प्रो. हरिशंकर – भारतीय संस्कृति तथा हिन्दी।
2. भारतीय संस्कृति, डॉ. रामजी उपाध्याय, पृष्ठ संख्या – 17
3. साहित्य शिक्षा और संस्कृति – डॉ. राजेन्द्र प्रसाद – पृ० संख्या – 185
4. आहूजा राम, भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन, संस्करण 2012
5. साहित्य शिक्षा और संस्कृति – डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पृष्ठ संख्या 190